**ओ३म्**

**‘जीवन व मृत्यु रहस्य विषयक वेदसम्मत ज्ञान’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

मनुष्य जीवन उसके जन्म से आरम्भ होता है और मृत्यु पर समाप्त हुआ प्रतीत होता है जबकि यह समाप्ति न होकर एक विराम है जिसके बाद जीवात्मा का पुनर्जम्न होता है। जन्म से पूर्व मनुष्य की जीवात्मा विषयक कहीं से कोई पुष्ट व यथार्थ जानकारी नहीं मिलती कि इससे पूर्व वह जीवात्मा कहां, किस स्थान पर व किस योनि में था? मृत्यु होने के बाद शरीर तो उसी रूप में विद्यमान रहता है परन्तु उसमें चेतना का अभाव हो जाता है जिससे प्रतीत होता है कि उस शरीर में से चेतना निकल गई है। यह चेतना क्यों व कैसे निकली व कहां गई? इन प्रश्नों का समाधान उपलब्ध साहित्य में नहीं मिलता। वेदों की शरण में जाने पर वैदिक साहित्य से इन सभी प्रश्नों का प्रायः पूर्ण समाधान हो जाता है। वेद बताते हैं कि संसार में तीन अनादि व नित्य पदार्थ हैं जो अमर वा अनन्त भी हैं। इनके नाम हैं ईश्वर, जीव व सृष्टि। ईश्वर व जीव दोनों चेतन पदार्थ हैं जिनमें ईश्वर सर्वव्यापक है और जीव एकदेशी सत्ता है। संख्या की दृष्टि से ईश्वर इस ब्रह्माण्ड में एक है और जीवों की संख्या मनुष्य के ज्ञान में अनन्त व अगणित हैं परन्तु ईश्वर को इन सभी जीवात्माओं का पूरा पूरा ज्ञान होने से ईश्वर के ज्ञान में जीवात्माओं की संख्या असीमित न होकर सान्त है। प्रकृति इस कार्य जगत का उपादान कारण है जो अत्यन्त सूक्ष्म है और सत्, रज व तम गुणों वाली त्रिगुणात्मक है। ईश्वर ने इस त्रिगुणात्मक कारण प्रकृति से ही इस संसार की रचना की है। सृष्टि की रचना करने के लिए ईश्वर का स्वरूप सच्चिदानन्द, निराकार, सर्वशक्तिमान, सर्वज्ञ, अनादि, अनन्त, अविनाशी, सर्वातिसूक्ष्म और सर्वार्न्तायामी होना आवश्यक है अन्यथा इससे इतर स्वरूप वाली अन्य किसी सत्ता से सृष्टि की रचना होना सम्भव नहीं है। वेदों के अनुसार ईश्वर का स्वरूप ऐसा ही है जिसे वेद व वैदिक साहित्य का अध्ययन करके जाना जा सकता है। ईश्वर व प्रकृति के स्वरूप को जानकर ईश्वर से सृष्टि की रचना का होना सम्भव सिद्ध होता है। वेद की सभी बातें सत्य होने से वेदों में सृष्टि को ईश्वर का कृतित्व निरुपित करना भी इसे सत्य सिद्ध करता है। ईश्वर द्वारा सृष्टि की रचना करने का उद्देश्य इसके एक व अनेक भोक्ताओं का होना भी अनिवार्य है। यदि भोक्ता न हों तो फिर सृष्टि रचना निरुद्देश्य होने से निरर्थक हो जाती है। ईश्वर भोक्ता इस लिए नहीं हो सकता कि वह सच्चिदानन्द स्वरूप वाला है। आनन्द से युक्त स्वरूप वाली ईश्वरीय सत्ता को यदि सृष्टि रूपी भोगों की अपेक्षा हो तो वह आनन्द से युक्त नहीं कही व मानी जा सकती। दूसरी बात यह भी है कि सृष्टि का भोग करने के लिए ईश्वर का अवतार व मनुष्य के समान जन्म मानना होगा जो कि इसलिए असम्भव है कि वह सर्वव्यापक व सर्वशक्तिमान है। यदि ईश्वर का मनुष्य योनि में जन्म वा अवतार मानें तो यह उस सर्वव्यापक चेतन सत्ता की अपूर्णता को प्रदर्शित करता है जिससे ईश्वर की सत्ता ही सन्देह के घेरे में आ जाती है। यदि ऐसा हो तो अपूर्ण होने से वह इस सृष्टि का भली भांति निर्माण व संचालन नहीं कर सकता क्योंकि सृष्टि से पूर्व प्रलय काल में उसके लिए आनन्द के भोग की वस्तुओं उपलब्ध न होने से उसका अस्तित्व ही बाधित होगा जो उसके सृष्टि रचना के कार्य में सहायक नहीं हो सकता। अतः यह स्वीकार नहीं किया जा सकता कि ईश्वर ने यह सृष्टि अपने लिये बनाई है।

अब प्रश्न यह शेष रहता है कि ईश्वर ने यह सृष्टि किसके लिए बनाई है? इसका उत्तर मिलता है कि यह सृष्टि चेतन सत्ता जीवात्माओं के लिए बनाई है जो कि सत व चित्त होने के साथ अनादि, नित्य, अविनाशी, अजर, अमर, एकदेशी, ससीम, पाप-पुण्य और शुभाशुभ कर्मों के कारण जन्म मरण के चक्र में फंसी हुई हैं। मनुष्य जो कार्य अनेक बार करता है उसको करने का उसका स्वभाव व संस्कार बन जाता है और वह उस कार्य को आवश्यकता व नियम के अनुसार करता है। ईश्वर अनादि काल से इस सृष्टि की उत्पत्ति व प्रलय करता आ रहा है। अनन्त बार वह इसी प्रकार की सृष्टि की रचना कर चुका है और सृष्टि के बाद नियत काल 4.32 अरब वर्ष बाद वह इसकी प्रलय करता है। प्रलय का काल भी 4.32 अरब वर्ष होता है जिसके बाद पुनः सृष्टि होती है। यह सृष्टि की उत्पत्ति और प्रलय का सिद्धान्त है। हमारी यह सृष्टि विगत लगभग 1.96 अरब वर्षों से चल रही है। जब सृष्टि रचना के आरम्भ से इसके 4.32 करोड़ वर्ष पूरे हो जायेंगे तो ईश्वर इसकी प्रलय करेगा। प्रलय का अर्थ है कि सृष्टि अपने मूल स्वरूप त्रिगुणात्मक प्रकृति में विलीन हो जायेगी। प्रलय से पूर्व जो मनुष्य आदि जीवात्मायें मृत्यु को प्राप्ति होती हैं उनके पाप-पुण्य के अनुसार उन्हें पुनः सुख व दुःख प्रदान करने का कार्य ईश्वर को करना होता है। प्रलय की अवधि पूरी होने पर ईश्वर नई सृष्टि की रचना कर पूर्व कल्प के जीवों के कर्मानुसार उनको सुख व दुःख रूपी फल प्रदान करता है। यही इस सृष्टि रचना का उद्देश्य है। मनुष्यादि प्राणियों के कर्म जिस प्रकार इस कल्प में चल रहे हैं, प्रलय होने के बाद के कल्पों में भी इसी प्रकार से चलते रहेंगे। जीवों के कर्मों की यह स्थिति कभी समाप्त न होने वाली प्रक्रिया है। इसका अन्त कभी नहीं होगा। सृष्टि के बाद प्रलय और प्रलय के बाद सृष्टि होती आई है और आगे भी जारी रहेगी, यह तर्क संगत व युक्तियुक्त सृष्टि उत्पत्ति व प्रलय का सिद्धान्त है।

यह भी जान लेना आवश्यक है जीवात्मा के शुभ व अशुभ कर्म बराबर होने व शुभ अधिक होने पर जीवात्मा को मनुष्य जन्म मिलता है व अशुभ कर्म अधिक होने पर पशु, पक्षी आदि निम्न योनियां प्राप्त होती हैं। पशु,पक्षी आदि योनियां भोग योनि कहलाती हैं और मनुष्य योनि उभय योनि कहलाती है। इस योनि में मनुष्य का जीवात्मा पूर्व कर्मों के फलों को भोक्ता भी है और नये शुभाशुभ कर्म करता भी है। यह अभुक्त शुभाशुभ कर्म ही भावी जन्म का आधार बनते हैं। मृत्यु के सन्दर्भ में यह भी जानना आवश्यक है कि मृत्यु अभिनिवेश क्लेश कहलाती है जो स्वयं में बहुत बड़ा दुःख है। प्रत्येक मनुष्य व अन्य प्राणी मृत्यु रूपी दुःख से भयभीत व त्रस्त रहते हैं। जीवन में जो दुःख आते हैं, उनसे भी सभी बचना चाहते हैं। इन दुःखों से बचने का एक ही उपाय है कि मनुष्य अशुभ व पाप कर्म न करे। पाप नहीं होंगे तो दुःख प्रायः नहीं होगा। शरीर पर भी विचार करें तो इसमें वृद्धि, ह्रास, आरोग्य व रोग आदि कष्टकारी विकृतियां होना देश काल व परिस्थितियों पर भी निर्भर होता है। वृद्धावस्था में अनेक लोगों को अनेक प्रकार के रोग व दुःख आदि होते हैं। इनसे सभी जीवात्मायें वा मनुष्य बचना चाहते हैं। इसका उपाय भी हमें वैदिक साहित्य से मिलता है। इसके लिए मनुष्य को शुभकर्म करते हुए ईश्वर व जीवात्मा आदि को जानकर ईश्वरोपासना द्वारा ईश्वर साक्षात्कार का प्रयत्न करना होता है। योगाभ्यास ही वह उपासना पद्धति है जिसका पालन कर समाधि की सिद्धि होने पर ईश्वर साक्षात्कार सम्भव होता है। समाधि की सिद्धि का अर्थ विवेक की प्राप्ति व इसके आधार पर मृत्यु के पश्चात दीर्घावधि के लिए जन्म-मृत्यु से **‘मोक्ष’** रूपी अवकाश के रूप में ईश्वर के सान्निध्य से पूर्ण आनन्द की प्राप्ति होती है। हमारे समस्त ऋषि, मुनि, योगी व याज्ञिक इसी समाधि द्वारा ईश्वर साक्षात्कार व मोक्ष की प्राप्ति के लिए प्रयत्नरत रहते रहे हैं। ऋषि दयानन्द व उनके अनुयायियों ने दर्शन व उपनिषदों आदि के भाष्य करके व आवश्यकतानुसार अनेकानेक ग्रन्थों की रचना कर साधना द्वारा ईश्वर प्राप्ति का मार्ग सुगम बना दिया है जिस पर चल कर जीवन को उन्नत बनाया जा सकता है। इस प्रकार योगाभ्यास आदि के द्वारा मनुष्य जन्म-मरण के चक्र से छूट भी सकता है। इस विषयक पूरे ज्ञान व विज्ञान को जानने के लिए ऋषि दयानन्द और उनके कुछ प्रमुख विद्वान अनुयायियों के साहित्य का अध्ययन सहायक होता है।

लेख का समापन करते हुए संक्षेप में यह जानना है कि जीवों को पूर्व कल्पों के अनुसार सुख व दुःख रूपी भोग प्रदान करने के लिए ईश्वर मूल त्रिगुणात्मक प्रकृति रूपी उपादान कारण से इस कार्य सृष्टि की रचना करता है। मनुष्य योनि उभय योनि होती है जिसमें कर्मों के फल भोग के साथ नये शुभ कर्म करने का अवसर मिलता है और इसके साथ ईश्वरोपासना व यज्ञ आदि परोपकार के अन्यान्य कर्म व साधनायें करके समाधि अवस्था में ईश्वर का साक्षात्कार कर मोक्ष को प्राप्त किया जा सकता है। सृष्टि और प्रलय का यह क्रम अनादि काल से चला आ रहा है और अनन्त काल तक इसी प्रकार से चलता रहेगा। इन सब बातों को जानकर मनुष्य को असत व अविद्या से युक्त कर्मों को त्याग कर विद्यायुक्त कर्मों को कर जन्म व मरण से छूटने का प्रयत्न करना चाहिये। जन्म का कारण पूर्व जन्म की मृत्यु और इस जन्म की मृत्यु का परिणाम पुनर्जन्म वा भावी जन्म होता है जिसका आधार अभुक्त कर्म होते हैं। इसी के साथ इस चर्चा को विराम देते हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**

**ओ३म्**

**‘वेद विदुषी गार्गी जी का ऋषि भक्त पं. लेखराम द्वारा चरित्र चित्रण’**

**-मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।**

 महर्षि दयानन्द के प्रमुख शिष्यों में एक शिष्य पं. लेखराम जी हैं। आपने अपने जीवन काल में अजमेर में महर्षि दयानन्द जी के दर्शन किये थे और उनसे शंका समाधान किया था। इसके बाद आपने अपना सारा जीवन ही ऋषि दयानन्द के मिशन के लिए समर्पित कर दिया। आपने महर्षि दयानन्द की मृत्यु के बाद उनका सर्वाधिक खोजपूर्ण एवं अनेक तथ्यों से युक्त सबसे अधिक प्रमाणित एवं महत्वपूर्ण जीवन चरित्र लिखा है। स्त्री-शिक्षा सहित अन्य अनेक ग्रन्थों की रचना भी आपने की। आप सर्वात्मा ऋषि दयानन्द और आर्य समाज के लिए समर्पित थे। आर्यसमाज के अनुयायियों को महर्षि दयानन्द जी और उन्हें अपना रोल माडल बनाना चाहिये। हम आजकल देख रहें हैं कि आर्यसमाज के हमारे विद्वानों के आदर्श क्रिकेट के खिलाड़ी बन रहे हैं। यह विद्वान क्रिकेट के मैच बड़े चाव से देखते हैं। अपना बहुमूल्य समय उसमें लगाते हैं और उनकी प्रशंसा व प्रचार भी करते हैं। आर्यसमाज के विद्वानों को इस पर विचार करना चाहिये कि कुछ आर्यों की यह प्रवृत्ति कितनी उचित है? आज हम पंडित लेखराम जी की एक लधु पुस्तक **‘स्त्री-शिक्षा’** से वैदिक नारी **‘गार्गी जी’** का चित्रण कर रहे हैं। इससे हमें ज्ञात होगा कि प्राचीन काल में हमारे देश की नारियां न केवल वेदपाठी और वेद विदुषी होती थीं अपितु वह वेदों के बड़े गम्भीर विद्वानों व ऋषि कोटि के मनीषियों से शास्त्रार्थ भी करती थीं। इस वर्णन से अन्य अनेक बातों पर भी प्रकाश पड़ता है जिसका उल्लेख पंडित लेखराम जी ने किया है।

पं. लेखराम जी लिखते हैं कि ‘इस प्रसिद्ध देवी ने अपने ज्ञान विज्ञान और बुद्धि कौशल से बहुत बड़ी प्रसिद्धि प्राप्त की। एक उपनिषद् में इनके और याज्ञवल्क्य का वर्णन इस प्रकार है कि एक बार दोहासाधिपति राजा जनक के यहां बड़ा यज्ञ हुआ। कुरु और पांचाल देश के बड़े बड़े प्रसिद्ध विद्वान् पंडित वहां पधारे। राजा ने यह जानने के लिए कि इस सभा में कौन सा विद्वान् बड़ा गंभीर ज्ञान रखता है और अच्छा व्याख्याता है, एक गौ के सीगों पर सोने के खोल (आवरण) चढ़ाकर ब्राह्मणों (विद्वानों) से कहा कि तुम में से जो व्यक्ति शास्त्र में अपूर्व योग्यता दिखावे, वह यह दान पारितोषिक रूप में प्राप्त करे। याज्ञवल्क्य को छोड़कर और किसी को साहस न हुआ कि उनको हाथ लगाए। यहां तक कि उनके कहने से उनका शिष्य सब गौए हाक कर उनके घर ले गया। इस बात पर समस्त विद्वानों में हलचल मची। राजा के पुरोहित ने उससे कहा कि तुम अपनी योग्यता के प्रमाण के बिना किस प्रकार इस दान के पात्र हो सकते हो? याज्ञवल्क्य ने इस सभा के समस्त विद्वानों को प्रणाम करके कहा कि मैं अपने ही को इस दान का पात्र समझता हूं। जिसको कुछ कहना हो मुझ से शास्त्रार्थ कर ले। उस समय सभा में छः महानुभाव जिन में गार्गी जी भी थी, शास्त्रार्थ के लिये समुद्यत हुए। पांच विद्वान तो थेड़ी देर में मौन धारण कर गए। गार्गी जी भी अन्त में हार गई परन्तु उन्होंने बड़ी देर तक ऐसी गम्भीरता और विचार से शास्त्रार्थ किया कि सभामंडप में पधारे लोग वाह वाह कह उठे और शास्त्रार्थ समाप्त हुआ।’

इस शास्त्रार्थ के विवरण का परिणाम बताते हुए पं. लेखराम जी लिखते हैं कि ‘गार्गी जी के शास्त्रार्थ से प्राचीनकाल के आर्यों के स्वभाव के सम्बन्ध में कई बातें ज्ञात होती हैं। प्रथम यह कि उस युग में आर्यों के विचार में पशु धन सबसे बड़ा धन समझा जाता था। उस समय भी स्त्रियां पठित होती थी। द्वितीय यह कि प्राचीन काल में पर्दा न था। स्त्रियां मकान की चार दीवारी के अन्दर कैद न रहती थी। प्रत्युत सभाओं और शास्त्रार्थों में भाग लेती थीं। तृतीय यह कि जिस प्रकार आजकल के लोग अपनी सम्मति समाचार पत्रों तथा पुस्तकों में प्रकाशित करके प्रसिद्ध करते हैं अथवा किसी सभा में खड़े होकर सुनाते हैं। उस युग में यह प्रथा न थी। उन दिनों में जो बात किसी को लोगों के हृदयों में जमाना होती थी तो वह शास्त्रार्थ की समिति में उपस्थित करता था और ऐसी समिति किसी यज्ञोत्सव का किसी अच्छे अवसर पर प्रबन्ध करती थी। इन सभाओं में ब्राह्मण अपनी विद्वता की धाक बैठाते थे और सभा के सभ्य सभासदों से प्रशंसित होते थे। लगभग ऐसी ही प्रथा यूनानादि में भी थी। जैसा कि लिखा है कि उस देश के प्रसिद्ध इतिहासज्ञ हरीडेविक ने ओपमन्यार के अखाड़े में अपने इतिहास पढ़े थे। ब्राह्मणों में अब भी प्रथा है कि जो पंड़ितों पर अपना प्रभाव जमाना चाहता है वह किसी अच्छे अवसर पर अपना चमत्कार दिखाता है और सबसे अधिक दान ले जाता है।’

हमें लगता है कि हमारा समाज वैदिक नारी गार्गी के यथार्थ महत्व से परिचित नहीं है, इसलिए हमने आज इस ऐतिहासिक विवरण को अपनी प्रस्तुति के लिए चुना। एक ओर प्राचीन काल में हमारे देश में गार्गी, मैत्रेयी, तारादेवी और मन्दोदरी सहित माता सीता और रूकमणी जैसी वेद पठित देवियां होती थीं जो शास्त्रार्थ भी करती थीं और वैदिक ज्ञान से प्रदीप्त विदुषी होती थीं, वहीं हमारे ही देश के विद्वानों ने अपने अज्ञान व स्वार्थों के कारण मध्यकाल में स्त्रियों के वेदाध्ययन पर ही केवल विराम ही नहीं लगाया अपितु अमानवीय दण्डों का विधान भी किया। यहां तक हुआ कि अपने समय में शास्त्रोें के प्रसिद्ध विद्वान स्वामी शंकराचार्य जी ने लिख दिया कि नारी नरक का द्वार है। हम पाठकों को यह भी अनुरोध करेंगे कि वह डा. रामनाथ वेदालंकार जी रचित ‘वैदिक नारी’ ग्रन्थ अनुशीलन अवश्य करें। इससे उन्हें नारी के आदर्श स्वरूप के विषय में सृष्टि के आदि ग्रन्थ वेदों में गौरवपूर्ण उल्लेख मिलेंगे जैसे संसार के किसी अन्य प्राचीन व अर्वाचीन ग्रन्थ में उपलब्ध नहीं है। इसी कारण वेद सर्वोपरि एवं सर्वोत्तम धर्म ग्रन्थ के रूप में आज भी प्रतिष्ठित हैं। ओ३म् शम्।

**-मनमोहन कुमार आर्य**

**पताः 196 चुक्खूवाला-2**

**देहरादून-248001**

**फोनः09412985121**